P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-11* July- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

आयुर्वेद की प्राचीनता व अर्थ

सारांश

पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति व विकास के साथ ही आयुर्वेद की उत्पत्ति व विकास की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। प्रागैतिहासिक मानव संभवतः स्वास्थ के प्रति सचेत रहा होगा क्योंकि विकास की प्रक्रिया में क्या खाना है, क्या नहीं खाना है, क्या पहनना है, क्या नहीं पहनना है, जैसे प्रश्नो के उत्तर, उसका स्वास्थ के प्रति सजगता को दर्शाते हैं। सिंधु घाटी सभ्यता से मिले साक्ष्यों से स्वास्थ्य विज्ञानं के विकास की प्रक्रिया का पता चलता है।वैदिक कालीन ग्रंथों से आयुर्वेद का स्पष्ट वर्णन मिलता है।जीवन के ज्ञान को आयुर्वेद कहा गया है। चूँकि जीवन नित्य है, शाश्वत है इसलिए आयुर्वेद को भी नित्य व शाश्वत माना गया है। बदलते वातावरण तथा आधुनिक चिकित्सा पद्दित के केमिकल युक्ता हानिकारक प्रभावों को देखते हुए वर्तमान समय में मानव अपनी पुरानी प्रचलित पद्दितयों की ओर अग्रसर हो रहा है। इन्ही पुरातन पद्दितयों में से एक आयुर्वेद है, जिसे आज जनमानस द्वारा अपनाये जाने व सरकारी संरक्षण की आवश्यकता है।

शिखा
शोधार्थिनी,
इतिहास विभाग,
मेरठ कॉलेज,
मेरठ

मुख्य शब्द : प्रथम नगरीय सभ्यता, व्याधि, चरक संहिता, ऋग्वेदिककाल, आयुर्वेद, ऋग्वेद, चरक, अथर्ववेद, उपवेद, सुश्रुत संहिता, काश्यप संहिता, अनादिव्यात, स्वाभावसंसिद्धलक्षणत्वात,भाव–स्वभाव नित्यवृत, नित्य, शाश्वत

प्रस्तावना

आयुर्वेद कब से अस्तित्व में है ? संभवतः जब से आयु (जीवन) है तब से जीवन को निरोगी बनाने की यह विद्या पृथ्वी पर है। आयुर्वेद कब अस्तित्व में आया होगा, यह विचारणीय प्रश्न है ?सिन्धु घाटी सभ्यता की उन्नत निकासी प्रणाली, नगरों के निर्माण में सार्वजनिक स्वस्थवृत्त के नियमों का पालन, कूडा डालने की उचित व्यवस्था, इन सब तथ्यों से प्रतीत होता है कि आयुर्वेद अति प्राचीन काल से ही विकसित हो चुका था तथा रोगियों की चिकित्सा के साथ ही स्वास्थ्य–विज्ञान का भी विकास हो चुका था। प्रथम नगरीय सभ्यता से प्राप्त साक्ष्यों से ज्ञात हुआ है कि मोहनजोदड़ो से प्राप्त काला पत्थर शिलाजीत है, जिसका उपयोग आज भी मूत्र रोगों में होता है। साथ ही मोहनजोदड़ों से जो मृगश्रृंग प्राप्त हुआ है, अनुसन्धानों से पता चला है कि उसका उपयोग भी अनेक व्याधियों के उपचार में होता था। मोहनजोदड़ों की खुदाई से जो खिलौने मिले हैं, चरकसंहिता के अध्याय आठ में बालकों के विनोद और उनकी बुद्धि के विकास के लिए अनेक पशु–पक्षियों की आकृति वाले खिलौनों का वर्णन मिलता है। कार्यभारभृव्य के सम्बन्ध में इनका वर्णन आयुर्वेद ग्रन्थों में किया गया है।

जिस प्रकार सिन्धु सभ्यता से ध्यानमग्न लोगों की मुद्रा की मूर्ति प्राप्त हुई है उससे अनुमान लगाया जा सकता है कि तत्कालीन समाज में मानव आध्यात्म के प्रति सजग रहा होगा। आयुर्वेद में अनेक व्याधियों के उपचार का वर्णन मिलता है। ऋग्वैदिक काल में अश्विनी कुमार आर्यों के चिकित्सक देवता थे। ये शल्यकर्म में निपुण थे।

चरक ने आयुर्वेद को शाश्वत कहा है, क्योंकि जब से 'आयु' (जीवन) का प्रारम्भ हुआ और जब से जीव का ज्ञान हुआ तभी से आयुर्वेद की सत्ता प्रारम्भ होती है। सुश्रुत ने यहां तक कि ब्रहमा ने सृष्टि के पूर्व ही आयुर्वेद की रचना की जिससे प्रजा उत्पन्न होने पर इसका उपयोग कर सकें।[1]

आयुर्वेद उपवेद के रूप में प्रसिद्ध है। कुछ लोग इसे ऋग्वेद का तथा अधिकांश अर्थवेद का उपवेद मानते हैं। छांद्योग्य उपनिषद में जिन विधाओं का निर्देश है उनमें आयुर्वेद का नाम नहीं है। चरणव्यूह (38) तथा प्रस्थानभेद (4) में आयुर्वेद शब्द प्रयुक्त हुआ है और वह ऋग्वेद का उपवेद माना गया है। चरक, सुश्रुत, काश्यप आदि आयुर्वेदीय संहितायें आयुर्वेद का सम्बन्ध अर्थवेद से मानती हैं। इस मतवैभिन्य से आयुर्वेद की प्राचीनता ही सिद्ध होती है क्योंकि समस्त ज्ञान का आदिस्रोत वेद है और वेदों में प्राचीनतम ऋग्वेद है। आयुर्वेद वेद का ही

अंग है अतः प्रत्यक्षमूलक शास्त्र होने के कारण इसके आधार पर वेद का प्रमाण्य सिद्ध किया जाता है।[2]

आचार्य चरक ने आयुर्वेद को अनादि और शाश्वत(नित्य) कहा है, परन्तु यह अनादि एवं शाश्वत क्यों है? इसका क्या कारण है? इस सम्बन्ध में आचार्य ने कहा है–

'सोउडयमायुर्वेदरू शाश्वतो निर्दिश्यतें, अनादिरवात, स्वभावससिट्लक्षगत्वात, भावस्वभावनित्यव्वाच्च।'

चू०स० 30–27

अनादिव्यात्– जिसकी उत्पत्ति न हो, उसे अनादि कहते हैं। आयुर्वेद की न कभी उत्पत्ति हुई है और न होती है, अतः यह अनादि है। भारतीय चिकित्सा एवं चिंकिटसेतर साहित्य में आयुर्वेद के ज्ञान अथवा उपदेश का उल्लेख मिलता है। ज्ञान तथा उपदेश को छोड़कर कहीं उत्पत्ति की प्रसंग नहीं मिलता है।

स्वाभावसंसिद्धलक्षणत्वात्

द्रव्यों का यह स्वभाव सिद्ध लक्षण है कि जो द्रव्य जिस गुण वाले होते हैं, उनसे उन्हीं शारीरिक गुणों की वृद्धि और उनसे भिन्न गुणों का हास होता है। इस प्रकार द्रव्यों का स्वभाव सिद्ध लक्षण आयुर्वेद की नित्यता का घोतक है।

भाव–स्वभाव नित्यवृत्त

भाव पदार्थ का जो अपना स्वभाव होता है, वह नित्य है। जैसे अग्नि में उष्णता एवं जल में द्रवता आदि। गुरूद्रव्यों के सेवन से गुरूत्व गुण की वृद्धि एवं लघुत्व का हास होता है। इसका ज्ञान आयुर्वेद से प्राप्त होता है, अतः आयुर्वेद नित्य है।

आयुर्वेद की नित्यता के उक्त साधक कारणों के अतिरिक्त मुख्य बात यह है कि आयुर्वेद अथर्ववेद का उपवेद है। वेद नित्य है, अतः उसका अंग आयुर्वेद भी नित्य है।[3]

विश्व के विद्वानों ने एकमत से स्वीकार किया है कि वेद सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं तथा उनमें रोग, कीटाणु, औषधियों और मन्त्रों का वर्णन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है, अत एव चरक सुश्रुत प्रभृति आचार्यों ने आयुर्वेद को अथर्ववेद का उपांग माना है–

'इह खल्वायुर्वेदो नामोपाड्गमर्थववेदस्यानुत्पाघैव प्रजाः क्ष्त्रोकशतसहस्त्रमध्यायसहस्त्रखकृतवान स्वयम्भूः

(सु.सू.अ.1)

चतुर्णमृक्समायजु रथर्वेदानमाथर्ववेदे भक्तिरादेश्या' अ०।

(च०सू०अ० 30)

यद्यपि आयुर्वेद मानव सृष्टि के प्रारम्भ से ही प्रादुर्भूत हुआ माना जाता है किन्तु यूरोपीय इतिहासकारों ने आज से तीन–चार हजार वर्ष के पूर्व में भारत के अन्दर चिकित्साशास्त्र समुन्नत था ऐसा स्वीकृत किया है क्योंकि उनके पास यहां के पूर्व के ऐतिहासिक तत्व उपलब्ध नहीं है। किन्तु अब अनुसन्धान हुए हैं उनसे भारतीय संस्कृति की प्राचीनता मानी हुई परिधि से भी अधिक पुरातन सिद्ध हो रही है। मोहनजोदारों की खुदाई ने पाश्चात्य ऐतिहासिक पण्डितों का मत परिवर्तन कर दिया है। अन्य भी शोध हो रहे हैं जिनसे प्राचीन भारत का गौरव विशेषतः प्रकाशित होने की संभावना है। भारत से ही इस विद्या का प्रसार यूनान और यूरोप आदि पाश्चात्य देशों में हुआ, यह भी ऐतिहासिक तथ्य है।[4]

मानव या प्राणिमात्र सृष्टि के आरम्भ से ही अपने हित या अहित का ज्ञान रखता आया है, अपनी आयु की वृद्धि और हानि करने वाली वस्तुओं का ज्ञान भी रखता आया है और उत्तरोत्तर नवीन–नवीन उपायों का अवलम्बन या अनुसन्धान करता आया है। इस प्रकार आयु (जीवन) और वेद (ज्ञान) दोनों सदैव रहे हैं और रहेंगें। अतः आयुर्वेद नित्य है। आयु के ऊपर हित या अहित प्रभाव डालने वाले संसार के जितने भी पदार्थ हैं, उनके स्वभाव या गुण सदैव वहीं रहे हैं, जो आज हैं और भविष्य में भी रहेंगें। जैसे अग्नि में दाहकत्व सदैव रहा है, है और रहेगा। उसके घातक प्रभाव से बचने और हितकारक प्रभाव के उपयोग के लिए प्राणी सदैव उद्यत रहा है, है और रहेगा।

इस प्रकार आयुर्वेद की नित्यता प्रमाणित होते हुए भी उसके सिद्धान्तों का सुव्यवस्थित संकलन कर ग्रन्थ रूप में निबद्ध करना बाद में ही प्रारम्भ हुआ। सभी प्राणियों को सब विषयों का अनुभव नहीं होता। समय–समय पर जिन विशिष्ट व्यक्तियों को जिन वस्तुओं का अनुभव हुआ उसके अनुसार बार–बार परीक्षा कर उन्होनें एक सिद्धान्त स्थिर कर लिया। इन्हीं सिद्धान्तों को मन्त्र और सिद्धान्तकर्ता को मन्त्र दृष्टा या ऋष्टि कहा गया है। इस प्रकार एक के बाद दूसरे सिद्धान्त सामने आने लगे, उनका उपदेश या प्रचार समाज में होने लगा और इन सिद्धान्तों के संकलनात्मक ग्रन्थों का निर्माण होने लगा। इसी आधार पर आयुर्वेद की भी उत्पत्ति मानना अनुचित नहीं है। भगवान चरक ने भी कहा है 'नहायुर्वेदस्या भूत्वोपत्तिरूपलभ्यते, अन्यत्रावबोधोपदेशाम्याम्, एतद्वै द्विम्धिकृत्योत्पतिमुदपदिश्न्त्येके' (च०सू० 30)

पुरातत्ववेताओं के अनुसार संसार की प्राचीनतम् पुस्तक ऋग्वेद है। विभिन्न विद्वानों ने इसका निर्माण काल ईसा के 3 हजार से 50 हजार वर्ष पूर्व तक का माना है। इस संहिता में भी आयुर्वेद के अति महत्व के सिद्धान्त यत्र–तत्र विकर्ण हैं। अनेक ऐसे विषयों का उल्लेख है जिनके सम्बन्ध में आज के वैज्ञानिक भी अभी तक सफल नहीं हुए हैं, जैसे यज्ञ के कटे हुए सिर को जोड़ना, विश्पला की कटी टांग के स्थान पर लोहे की टांग लगाना आदि। यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में भी इसी प्रकार आयुर्वेदिक विषयों का उल्लेख मिलता है। अथर्ववेद में शरीर शास्त्र, औषधि एवं चिकित्सा के विविध अंगो और विधियों का वर्णन प्रचुरता से मिलता है। इसीलिए आयुर्वेद अथर्ववेद का ही उपवेद माना जाता है। वेदों के बाद ब्राहमण और उपनिषद ग्रन्थों में भी इनका क्रमशः विकसित और विस्तृत विवेचन मिलता है।[5]

आयुर्वेद शब्द दो शब्दों के योग से बना है– आयुरूवेद=आयुर्वेद। आयु के वेद को आयुर्वेद कहते हैं– आयुषवेदः=आयुर्वेदः। आयु और वेद शब्दों के अलग–अलग अर्थज्ञान के पश्चात ही आयुर्वेद शब्द का वास्तविक अर्थ जाना जा सकता है, इसलिए इन दोनों शब्दों की व्याख्या की जा रही है।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-11* July- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

आयु का स्वरूप– शरीर, इन्द्रिय, मन और आत्मा के संयोग को 'आयु' कहते हैं। पंचमहाभूत विकारात्मक एवं आत्मा के भोगायतन को शरीर कहते हैं। श्रोत्र – त्वचा – नेत्र – जिव्हा और घ्राण ये ज्ञाननेंद्रियाँ कहलाती हैं, वाणी – हाथ – पैर – मलद्वार और मूत्रमार्ग ये पांच कर्मेन्द्रियाँ हैं। ज्ञान एवं कर्म दोनों होने के कारण मन उभयात्मक इन्द्रिय कहलाता है। ज्ञान का अधिकरण तथा ज्ञान का प्रतिसन्धाता आत्मा होता है। इन शरीर, इन्द्रिय, मन एवं आत्मा का अदृष्टवश (भाग्यवश) जो संयोग होता है, वही संयुक्त स्वरूप आयु का स्वरूप है। चौतन्य की स्थिति को आयु कहते हैं– ष्चौतन्यानुवर्तमायुरू।' जीवितकाल को आयु कहा जाता है– 'आयुर्जीवितकालरू (अमरकोष 2989120)। शरीर और जीवात्मा के संयोग को जीवन कहते हैं और जीवन से संयुक्त काल को आयु कहते हैं, शरीर जीवयोर्योगो जीवनम्, तेनावच्छितरू कालरू आयुरू'।

आयु के पर्याय– आयु, धारि, जीवित, नित्यग और अनुबन्ध ये आयु के पर्याय हैं। समान अर्थ बतलाने वाले शब्दों को पर्याय कहते हैं।

'वेद' शब्द का अर्थ है – ज्ञान। संस्कृत के विद् धातु से वेद शब्द बना है। विद् धातु का प्रयोग चार अर्थों में किया जाता है– 1– सत्ता (अस्तित्व), 2– ज्ञान, 3– विचार और, 4– प्राप्ति, विद् धातु के अर्थ होते हैं। अर्थात् 1– जिससे असितत्व का बोध हो (विघते, अस्ति) 2– जिससे जाना जाये (वेत्ति, ज्ञायते), 3– जिससे आयु के विषय में विचार किया जाये (विन्ते, विचार्यते) और 4– जिससे आयु को प्राप्त किया जाये (विन्दते विदन्ति लभ्यते,)। इन चार अर्थों में विद् धातु प्रयुक्त होता है।

आयुर्वेद शब्द का अर्थ– इस प्रकार आयु और वेद इन दोनों शब्दों की व्याख्या के पश्चात् सुगमता से आयुर्वेद शब्द का अर्थ बुद्धिगम्य हो जाता है। एवंच्च जिस शास्त्र में आयु का अस्तित्व हो, जिससे आयु का ज्ञान हो, जिससे आयु सम्बन्धी विचार हो और जिससे आयु की प्राप्ति हो, उस शास्त्र को 'आयुर्वेद' कहते हैं।[6]

जीवन–वृक्ष जब पूर्णतः स्वस्थ और रोगमुक्त होता है, तभी उसमें उत्तम फूल और फल लगते हैं। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि जीवन को आरोग्यमय, दीर्घायुष्य – सम्पन्न और शारीरिक तथा मानसिक कष्टों से मुक्त रखा जाये। शारीरिक दुःख मानसिक दुःख तथा सभी प्रकार की आधि–व्याधि को दूर करने के लिए कल्याणमय हितकर आयुष्य की उपलब्धि हेतु सबसे अधिक उपयोगी जो ज्ञान–विज्ञान है, उसी को आयुर्वेद – विज्ञान कहा जाता है।[7]

साहित्यावलोकन

आचार्य प्रियव्रत शर्मा, आयुवेद का वैज्ञानिक इतिहास, चौखम्भा ओरियन्टालिया, वाराणसी, 2003
सम्बंधित पुस्तक में आयुर्वेद की ऐतिहासिकता, आयुर्वेद का अवतरण, वेदों में आयुर्वेद, भारतीय इतिहास में आयुर्वेद को राजश्र्य, आयुर्वेद के अंग व् अन्य देशों पर आयुर्वेद का तथा अन्य देशों का आयुर्वेद पर क्या प्रभाव पड़ा, की जानकारी मिलती है 8 इसके अतिरिक्त यह पुस्तक आयुर्वेद से सम्बंधित जानकारी का प्रमुख स्रोत है 8 आयुर्वेद शिक्षा संस्थानों में पुस्तक की काफी लोकप्रियता है।

रविदत्त त्रिपाठी, आयुर्वेद– इतिहास एवं परिचय, नई दिल्ली, 1982.

सम्बंधित पुस्तक में आयुर्वेद का इतिहास, चरक व् सुश्रुत परंपरा, भारतीय भैषज प्रणाली, आयुर्वेद शिक्षा संस्थान तथा आयुर्वेद के मूल सिंद्धान्तों की जानकारी मिलती है. इसके अतिरिक्त यह पुस्तक आयुर्वेद के शिक्षा संस्थानों के लिए आयुर्वेद की जानकारी का स्रोत है।

डॉक्टर ब्रह्ममनन्द त्रिपाठी , चरक संहिता, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 1995

यह ग्रन्थ आयुर्वेद के इतिहास, आयुर्वेद का अर्थ व् आयुर्वेद के सिंद्धान्तों की व्यख्या करती है. सम्बन्धित टीका आयर्वेद की जानकारी का प्रमुख स्रोत है।

कविराज डॉक्टर अम्बिका दत्त शास्त्री, सुश्रुत संहिता, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, बनारस, 1994

आयुर्वेद के विषयों की जानकारी का भंडार इस पुस्तक में देखा जा सकता है. यह पुस्तक आयुर्वेद की सिंद्धान्तों तथा सुश्रुत परम्परा को आयुर्वेद की दृष्टि से व्यख्यायित करती है।

निष्कर्ष

निःसन्देह प्राचीन भारत से चली आ रही चिकित्सा पद्धति वर्तमान समय में भी अपनी विशिष्टता बनाए हुए है। आयुर्वेद का अस्तित्व जीवन के प्रारम्भ से ही है। शरीर को निरोग रखने की यह चिकित्सा पद्धति अनेक वर्षों से भारतीयों को सुखमय जीवन प्रदान कर रही है। इसे जन सामान्य द्वारा अपनाया जाये व इसके विकास हेतु सरकारी सहायता प्रदान की जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *आचार्य प्रियव्रत शर्मा, आयुवेद का वैज्ञानिक इतिहास, चौखम्भा ओरियन्टालिया, वाराणसी, २००३, पृष्ठ–१*
2. *आचार्य प्रियव्रत शर्मा, आयुवेद का वैज्ञानिक इतिहास, चौखम्भा ओरियन्टालिया, वाराणसी, २००३, पृष्ठ–८*
3. *रविदत्त त्रिपाठी, आयुर्वेद– इतिहास एवं परिचय, नई दिल्ली, १९८२, पृष्ठ–१८*
4. *सुश्रुत संहिता, पृष्ठ–६*
5. *चरक संहिता, पृष्ठ–२७*
6. *रविदत्त त्रिपाठी, आयुर्वेद – इतिहास एवं पश्चिम, नई दिल्ली १९८२, पृष्ठ–२३०*
7. *रविदत्त त्रिपाठी, आयुर्वेद – इतिहास एवं पश्चिम, नई दिल्ली १९८२, पृष्ठ–२*